प्रसंग :
भारत का राष्ट्रगान जनगणमन एवं रवीन्द्रनाथ

पूर्णेन्दु मुखोपाध्याय

प्रसंग : भारत का राष्ट्रगान जनगणमन एवं रवीन्द्रनाथ

पूर्णेन्दु मुखोपाध्याय
भूतपूर्व बंगला विभागाध्यक्ष
बी. एन. कॉलेज, पटना विश्वविद्यालय

प्रतर्क साहित्य संसद
14 विशाल निकेत, बाजार समिति रोड
पटना-800 016

Prasang : Bharat ka Rastragan Janaganamana
Evam Rabindranath (A Monograph)

by Purnendu Mukhopadhyaya

मूल बंगला से अनुवाद : विद्युत पाल

चतुर्थ आवरणपृष्ठ पर दिया गया उद्धरण :
आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध से

प्रथम संस्करण : मई 2011

सहयोग राशि : पाँच रुपये मात्र

प्रतर्क साहित्य संसद की ओर से विद्युत पाल द्वारा प्रकाशित एवं
श्रमिक कम्प्यूटर्स, रामकृष्ण कालोनी (महाबीर लेन),
पटना-800 006 में मुद्रित ।

अक्सर एक तूफान खड़ा किया जाता है । गंभीर आरोप उछाला जाता है कि हमारा राष्ट्रगान 'जनगणमन' ईंगलैन्ड के तत्कालीन राजा, पाँचवें जॉर्ज की प्रशस्ति में लिखा गया था । और इस गंभीर आरोप की बुनियाद पर वे इसे राष्ट्रगान के दर्जे से हटाने की मांग करते हैं। यह बात सभी मानेंगे कि विदेशी राजा की स्तुति में लिखे गये किसी गीत को राष्ट्रगान बने रहने की स्वीकृति मिल ही नहीं सकती है । अगर यह सच प्रमाणित हो कि 'जनगणमन' पाँचवें जॉर्ज की स्तुति में लिखा गया था तो इस गीत को राष्ट्रगान के मर्यादित आसन से हटना ही पड़ेगा ।

उपरोक्त आरोप के साथ-साथ एक और आपत्ति उठाई जाती है कि इस गीत में मौजूदा भारत के सभी प्रान्तों का जिक्र नहीं है । अतः राष्ट्रगान के तौर पर अधूरा है यह गीत ।

पहला आरोप कुछ-कुछ दिनों के अन्तराल पर उठते ही रहता है। हाल में टेलिविजन पर एक धार्मिक चैनल के माध्यम से नये तौर पर काफी जोरदार ढंग से इस आरोप को उछाला गया है । कुछ लोग समझ भी रहे हैं कि इसके पीछे एक खास किस्म की राजनीति है । क्योंकि 'वन्देमातरम' शीर्षक गीत को 'जनगणमन' के प्रतिपक्ष के रूप में खड़ा किया गया है ।

बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय ने खुद एक कार्यक्रम में अपने गले की माला युवा रवीन्द्रनाथ को पहनायी थी तथा सबके सामने युवा कवि की तारीफ की थी । जिस देशप्रेम के उन्मेष का संदेश वाहक थे बंकिमचन्द्र उसी देशप्रेम का भरापूरा रूप रवीन्द्रनाथ में देखने को मिलता है । बंकिम की सोच में हिन्दुत्व का एक पुट था जबकि रवीन्द्र की सोच पूरी तरह धर्मनिरपेक्ष थी । याद रखना होगा कि रवीन्द्रनाथ धर्मद्रोही नहीं थे । उनकी धर्मचेतना विश्व-मानवता की स्निग्धता से ओतप्रोत थी ।

'जनगणमन' की रचना सन 1911 के दिसम्बर महीने में हुई। सम्राट पाँचवां जॉर्ज उसी समय भारत आया था। दिल्ली में उसका स्वागत किया गया। रवीन्द्रनाथ द्वारा लिखित एक पत्र को पढ़ने से जानकारी मिलती है कि उनके एक नजदीकी दोस्त ने उन्हे राजवन्दना की तर्ज पर एक गीत लिखने का अनुरोध किया। उसी पत्र से यह भी जानकारी मिलती है कि इस प्रस्ताव पर कवि विस्मित एवं मर्माहत हुए। इसी घटना की जोरदार प्रतिक्रिया के तौर पर कवि ने जनगणमन की रचना की। दिनांक 20.11.37 को पुलिन बिहारी सेन को लिखा गया यह पत्र इस प्रकार है -

"राजसरकार में प्रतिष्ठित मेरे एक मित्र ने मुझे सम्राट का जयगान रचने के लिये विशेष रूप से अनुरोध किया था। सुनकर विस्मित हुआ था मैं। विस्मय के साथ-साथ मन में ताप का भी संचार हुआ था। इसी की जोरदार प्रतिक्रिया के तौर पर मैंने 'जनगणमन अधिनायक' गीत में उस भारत-भाग्य-विधाता की विजय का उद्‌घोष किया है, पतन और अभ्युदय के कठोर मार्ग पर युगों से आगे बढ़ते यात्रियों के जो हमेशा सारथी रहे हैं, जो जनता के अन्तर्यामी हैं एवं पथ प्रदर्शक हैं। यह बात कि उस युगयुगान्तर के मानव हृदय के भाग्यरथ का चालक पाँचवां, छठा या कोई भी जॉर्ज कभी हो ही नहीं सकता है इसका एहसास उस राजभक्त मित्र को भी हो गया था। क्योंकि उनकी भक्ति चाहे कितनी प्रबल क्यों न हो, बुद्धि का अभाव नहीं था।"[1]

दिल्ली में पाँचवें जॉर्ज के अभिषेक पर्व के समापन के दो सप्ताह के बाद (26 से 28 दिसम्बर 1911)कलकत्ते में भारत के राष्ट्रीय कांग्रेस का अधिवेशन सम्पन्न हुआ। इस अधिवेशन के दूसरे दिन 'जनगणमन' गाया गया।[2] किसी-किसी के मन में यह भ्रांति थी कि यह गीत पहली बार दिल्ली में पाँचवें जॉर्ज के अभिषेक पर गाया गया (12 दिसम्बर 1911)। लेकिन यह भ्रांति निराधार थी। किसी सरकारी या गैरसरकारी स्रोत से इस भ्रांत सोच के समर्थन में कोई

तर्क आज तक नहीं मिला । खैर, उस कांग्रेस अधिवेशन में कुल चार गीत गाये गये । पहले दिन का उद्घाटन 'वन्देमातरम' गीत से हुआ । दूसरे दिन का उद्घाटन हुआ 'जनगणमन' से ।[3] रवीन्द्रनाथ के जीवनी लेखक प्रभात मुखोपाध्याय से जानकारी मिलती है - "इस गीत के गायन के बाद कांग्रेस के हितैषियों द्वारा भेजे गये शुभकामनाओं के टेलिग्राम व पत्र आदि पढ़े गये । इसके उपरान्त राजदम्पति के प्रति आज्ञाकारिता जताते हुये एवं स्वागत करते हुये एक प्रस्ताव पारित किया गया तथा राजदम्पति के लिये रची गई एक हिन्दी प्रशस्तिगीत गाया गया ।"[4] तीसरे दिन का उदघाटन सरला देवी द्वारा रचित 'अतीत की गौरव कथा' के गायन से हुआ । कांग्रेस के इसी 26वें अधिवेशन के सरकारी प्रतिवेदन में लिखा हुआ है- "The proceeding commenced with a patriotic song composed by Babu Rabindranath Tagore !" उसी प्रतिवेदन में आगे यह भी लिखा है कि-"After that a song of welcome to their Imperial Majesties composed for the occasion was sang by choir !"[5]

अमृतबाजार पत्रिका (दिनांक 28 दिसम्बर 1911) एवं सुरेन्द्रनाथ बन्दोपाध्याय द्वारा प्रकाशित 'बेंगॉली' अखबार में भी घटनाक्रम के इसी रूप का समर्थन मिलता है ।

इस के कुछ दिनों के बाद दिनांक 25 जनवरी 1912 को आदि ब्राह्म समाज के माघोत्सव में रवीन्द्रनाथ ने खुद ही इस गीत को गाकर सुनाया । फिर जनवरी में ही प्रकाशित 'तत्वबोधिनी' पत्रिका में 'भारत भाग्यविधाता (ब्रह्म संगीत)' के नाम से इस गीत का पहला प्रकाशन हुआ ।[6] यहाँ खास तौर पर गौर किया जा सकता है कि कवि ने स्वयं इस गीत को ब्रह्म संगीत कहा है । हालांकि राजनीति के मंच पर इस गीत की जरूरत खत्म नहीं हुई । वर्ष 1917 में कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन का उद्घाटन इसी गीत से हुआ । अनगिनत बार सभाओं, बैठकों में तथा उत्सव आयोजनों में इस गीत की अपरिहार्यता साबित हो चुकी है । इस गीत का इतिहास खुद सबूत है कि इस गीत का

आन्तरिक भाव एवं अर्थ जनता के हृदय को स्पर्श करते रहा है तथा आम आदमी को जोश से भरते रहा हे ।

इस गीत के भाववस्तु का विश्लेषण कर कुछेक विद्वानों ने दिखाया है कि वास्तविक तौर पर यह ब्रह्म संगीत ही है । राजस्तुति का गीत नहीं । सुधीर चन्द्र कॉर अपने विख्यात ग्रंथ 'जनता के रवीन्द्रनाथ' में कहते हैं - "गीत के तीसरे अनुच्छेद के 'चिरसारथी', 'रथचक्र', 'विप्लव माझे', 'शंखध्वनि' आदि शब्द जीवन संघर्ष में 'युगों से आगे बढ़ रहें यात्री समूह के भाग्य-विधाता', भारतीय विरासत का मूलतत्व, महाकाल या महेश्वर के प्रतीक हैं । अगले ही अनुच्छेद में उसी परम आराध्य का मातृरूप में भी वन्दन किया गया है । क्योंकि हमारे देश में ईश्वर को पितृरूप के साथ-साथ, स्मृति के पार सुदूर अतीत काल से मातृस्वरूप भी समझा जाता रहा है । 'घोर तिमिर घन निविड़ निशीथ' में, 'पीड़ित मूर्छित देश' में दू:स्वप्न के आतंक की पृष्ठभूमि में, जो शक्ति अपने गोद में लेकर हर पल हमारी रक्षा करती है वह है ईश्वर की देशमातृप्रतिमा ! पितृरूप व मातृरूप में विराजमान, युगयुगान्तर के इतिहास क्रम में उन्मोचित एवं इस देश के कोटि-कोटि नरनारियों के मानसपट पर उद्भासित भागवत सत्व को ही कवि ने 'जनगणमन' गीत में अपना उद्येश्य बनाया है ।"[7] अब देखा जाय खुद कवि इस गीत के पीछे अपनी सोच की व्याख्या किस प्रकार करते हैं । सुधारानी देवी को कवि ने एक पत्र लिखा दिनांक 29.03.39 को । उस पत्र में उन्होंने लिखा -"शाश्वत मानव के इतिहास पथ पर युगों से धावित पथिकों के रथयात्रा के चिरसारथी के रूप में मैं चौथे या पाँचवें जॉर्ज की स्तुति कर सकता हुँ, इस किस्म की असीमित मूढ़ता का सन्देह जो मेरे बारे में कर सकते हैं उनके प्रश्नों का उत्तर देना आत्म-अपमान है ।"[8]

जो लोग इस गीत के रचनाकाल के ऐतिहासिक घटनाक्रमों से परिचित हैं, वे जानते हैं कि रवीन्द्रनाथ का मनोभाव उस समय राजभक्ति की ओर बिल्कुल ही सक्रिय नहीं था । बल्कि सच्चाई है

कि ठीक इसके विपरीत मार्ग पर ही सक्रिय था । वर्ष 1905 में लॉर्ड कार्जन द्वारा बंगाल को तोड़ने की धूर्त्ततापूर्ण कोशिश के विरूद्ध जनक्रोध की जो आग जल उठी थी, प्रतिरोध आन्दोलन का जो तीव्र ज्वार उठा था, रवीन्द्रनाथ प्रत्यक्ष तौर पर उस आन्दोलन में शामिल हुये थे । रास्ते पर उतरकर जुलूस में चले थे एवं आम लोगों की कलाई में राखी बांधकर विभेदनीति को शिकस्त देने को प्रयासरत हुये थे । उस समय उन्होने देशप्रेम के कई सारे लोकप्रिय गीत लिखे । दरअसल उनके अधिकांश मधुर व जोश-भरे, देशप्रेम के उल्लेखनीय गीत इसी अवधि में लिखे गये । उन गीतों से आन्दोलन में वेग का संचार हुआ था । गीतों की रचना के अलावा कवि उस समय सुरेन्द्रनाथ, विपिनचन्द्र पाल जैसे लोगो की तरह लगभग पेशेवर वक्ता बन चुके थे । हालांकि उनका अधिकांश भाषण लिखित तौर पर प्रस्तुत किया जाता था । बाद में समकालीन पत्र-पत्रिकाओं में उन भाषणों का प्रकाशन हुआ है । उन भाषणों में मूल्यवान मार्गनिर्देश दिये गये है । रवीन्द्रनाथ की समझ थी कि सिर्फ राष्ट्रीय भावना के आवेग के सृजन से काम नहीं चलेगा, राष्ट्र को एक मजबूत यथार्थ के आध ार पर खड़ा करना होगा, तभी अत्यंत चतुर इस ब्रिटिश ताकत को परास्त करना संभव होगा । संकीर्णतावाद के आत्मघाती मनोभाव को जड़ से उखाड़ फेंकना होगा । आदमी-आदमी के बीच सामाजिक विभेद की हानिकारक नीति को खत्म करना होगा । सकारात्मक देशप्रेम को जागृत करना होगा । उसके पहले देशप्रेम के सही स्वरूप के बारे में जनता को बताना जरूरी है । 'आत्मशक्ति(1905)', 'भारतवर्ष(1906)', 'राजाप्रजा(1908)', 'सन्देह(1908)', 'स्वदेश' आदि निबंधों में उनकी राजनीतिक सोच की व्याप्ति परिलक्षित होती है । दूसरे मुल्कों को कब्जे में करने की अंग्रेजों की तीव्र लालसा को इन निबंधों में उन्होने अपने शब्दों के कोड़े से जर्जर किया है । उसी के साथ, उन्होंने इस सम्बन्ध में भी सही मार्ग निर्देश दिया है कि किस तरह एकता की क्रियात्मक चेतना को यथार्थ के मजबूत धरातल पर खड़ा करना होगा । 'न्याय का अन्याय', 'इम्पिरियलिज्म',

'गलाघोंट', 'राजभक्ति', 'राजसभा' आदि रचनाओं में साम्राज्यवादी शासक का मुखौटा खोलने के लिये जिस भाषा का उन्होंने प्रयोग किया है उस भाषा में कवि-सुलभ ललित वाणी का लेशमात्र नहीं है । सिडिशन-बिल के खिलाफ जोरदार प्रतिवाद 'गलाघोंट' निबन्ध में मुखर हो उठा है । बाँटने के अभिप्राय से भारत में अलगाववाद के बीजारोपण की साम्राज्यवादी नीतियों के प्रयोग को कवि ने अंग्रेज राष्ट्र के लिये शर्मनाक बताया है । इस नीच साजिश के विपरीत रवीन्द्रनाथ ने भारत के आत्मिक स्वत्व को महसूस किया है । आदमी की पहचान सिर्फ 'बायोलॉजिकल मैन' में सीमित नहीं है; आदमी में एक 'रैशनल' स्वत्व विराजमान रहता है। कुछ लोग इसे 'आत्मिकशक्ति' जैसी अभिधा के द्वारा चिन्हित करना चाहते हैं । कवि ने भारत के बाहरी रूप के भीतर एक आत्मिक शक्ति की मौजूदगी का एहसास किया हे । 'गोरा' (1910) उपन्यास में गोरा उसी आत्मिक स्वत्व का आविष्कार करने के लिये भारत-परिक्रमा में निकल पड़ा है । 'गोरा' उपन्यास के 76वें अध्याय में है - "मुझे आज उस देवता का मंत्र दीजिये जो हिन्दू, मुसलमान, इसाई, ब्राह्म सभी का देवता हो, जो केवल हिन्दूओं का नहीं बल्कि भारतवर्ष का देवता हो ।" गोरा प्रकाशित होने के कुछ दिनों के बाद दिनांक 2 जुलाई 1910 को 'भारत-तीर्थ' शीर्षक उनकी सुविख्यात कविता प्रकाशित हुई । भारत की कल्पना विश्वमानवता की तीर्थभूमि के रूप में कर, कवि सभी राष्ट्रीयता, धर्म एवं जाति के लोगों का इस तीर्थ-भूमि में आहवान करते हैं । 'जनगणमन' में जो भावना दिखती है उसके साथ 'भारत-तीर्थ' कविता की भावना का गहरा रिश्ता है । अतः यह सोचना कि 'जनगणमन' में कवि पाँचवें जॉर्ज कहलाने वाले एक विदेशी सम्राट की प्रशस्ति में अपने कलम की कीमती स्याही खर्च करेंगे, मूर्खता ही कहलायेगा ।

अंग्रेज शासक के साम्राज्यवादी चरित्र के बारे में कवि के मन में कोई संशय नहीं था । सन् 1905 के बंगभंग-विरोधी आन्दोलन के बाद कवि के मन में सरकार के प्रति किसी मोह का लेशमात्र निशान

नहीं मिलता हे । बाद के वर्षो में हिजली जेल के निहत्थे बन्दियों पर गोली चलाये जाने का प्रतिवाद एवं जालियाँवालाबाग के बर्बर नरसंहार के प्रतिवाद में नाईट की उपाधि का त्याग साबित करता है कि कवि ने साम्राज्यवाद के साथ समझौता नहीं किया । सन 1919 के 13 अप्रैल को, पंजाब में नये साल के पहले दिन, डेढ़ सौ की फौज के साथ जनरल डायर ने 1600 राउन्ड गोलियाँ चलवाई, सैंकड़ों निरीह, निहत्थे पुरूष, स्त्री एवं बच्चों को मौत के घाट उतार दिया । अखबारों में इस दानवीय संहार की खबर दबा दी गई । कुछ दिनों के बाद जो थोड़ी सी खबर किसी माध्यम से कवि को मिली उसी से वे अत्यंत विचलित हो उठे । कवि का संवेदनशील मन देशवासियों की वेदना से भर उठा । इस घटना के बारे में प्रभात मुखोपाध्याय लिखते हैं - "तय था कि दिनांक 19 मई को शांतिनिकेतन में किसी सामाजिक कार्यक्रम में कवि अध्यक्षता करेंगे । उसी तर्ज पर निमंत्रण पत्र भी छपाये गये । लेकिन पंजाब की खबर मिलने के बाद सारे कार्यक्रम खारिज कर वे कलकत्ता चले आये ।"[9] इसके बाद की घटनाओं का ब्योरा प्रशांत महलानविश स्पष्टता के साथ देते हैं- "कवि ने तब कहा, रातभर सो नहीं पाया । बस अब खत्म हुआ । जो कुछ मेरे करने के लिये था कर चुका हूँ । महात्माजी पंजाब जाने को राजी नहीं हुये । इसलिये मैं खुद ही गया था चित्तरंजन के पास । कहा कि इस समय देश का खामोश रहना असहनीय है । तुमलोग प्रतिवाद सभा का आह्वान करो । मैं खुद ही बोल रहा हुँ कि उस सभा की अध्यक्षता करूंगा । चित्तो थोड़ा सोचकर बोला, ठीक है । और किसका भाषण होगा ? मैने कहा, तुमलोग तय करो । चित्तो थोड़ा और सोचा ! फिर कहा, आप अगर अध्यक्षता करेंगे तो उसके बाद किसी के भाषण की जरूरत नहीं पड़ेगी। आपका अकेले बोलना ही काफी है । मैंने कहा, तो वही होगा । अब सभा बुलाओ । तब चित्तो ने कहा, आप अकेले ही जब भाषण देंगे, आप ही अध्यक्षता करेंगे, तो सबसे अच्छा होगा आप ही के नाम से सभा बुलाई जाय । समझ गया उनलोगों से होगा नहीं । लेकिन मेरे अन्दर धँसा हुआ है यह [वाण], असहनीय है कि

कुछ कर नहीं पाऊंगा ।''[10]

"यदि तोर डाक शुने केउ ना आसे तबे एकला चलो रे'' गीत के रचयिता, उस दिन अकेले ही बढ़े थे उनकी अपनी राह पर । ऊपर दिये गये उद्धरण में कवि ने जिस निद्राहीन रात का जिक्र किया उस रात को वह यही सोचते रहे कि तत्काल अकेले उनके द्वारा क्या किया जा सकता है । रात के अंतिम घड़ियों में कवि ने ब्रिटिश सरकार के नाम, 'नाईट' उपाधि को त्यागते हुये पत्र लिखा । 'नाईट' उपाधि का त्याग कर देशवासी के अपमान, यंत्रणा और क्षोभ को उन्होंने अकेले ही प्रतिवाद की भाषा दी । रवीन्द्रनाथ के देशप्रेम का यह ज्वलन्त उदाहरण हाथ के सामने रहने के बाद भी अगर हम उन्हे अंग्रेज सम्राट का स्तुतिकार कहें, तो क्या हम खुद ही अपने विवेक की कसौटी पर अपराधी साबित नहीं होंगे ?

चतुर अंग्रेज सरकार को कभी आँकने में भूल नहीं हुई कि रवीन्द्रनाथ कितनी दूर तक अंग्रेज राजसत्ता के खिलाफ थे । तत्कालीन पूर्वी बंगाल एवं असम प्रांत के शिक्षा विभाग के डायरेक्टर द्वारा एक गुप्त सर्कुलर जारी किया गया था । दिनांक 26 जनवरी 1912 को 'बेंगॉली' पत्रिका ने उस सर्कुलर को छाप दिया । सर्कुलर इस प्रकार है - "It has come to my knowledge that an institution known as 'Shantiniketan' or Brahmacharyaashrama at Bolpur in the Birbhum District of Bengal is a place altogether unsuitable for the education of the son of government servants. As I have information that some government servants in this province have sent their children there, I think it necessary to ask you to warn any well disposed government servant whom you may know or believe to have sons at this institution or to be about to send sons to it, to withdraw them or refrain from sending them, as the case may be. Any connection with the institution in question is likely to

prejudice the future of the boys who remain pupils of it after the issue of the present warning."[11]

उपर दिये गये तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्टतः पता चलता है कि रवीन्द्रनाथ ब्रिटिश सम्राट की स्तुतिगान के लिये गीत रचे होंगे यह कल्पना भी मूढ़ता का परिचायक है । दुःख की बात है कि आज भी एक किस्म की मूढ़ता के आगे आत्मसमर्पण करने वाले कुछ लोग एक गलत धारणा की लाश अपने कंधों पर ढो रहे हैं । ये मूर्ख, आज भी विद्वान की तरह उस गलत धारणा को जोरदार आवाज में प्रतिष्ठित करने की कोशिश चलाये जा रहे हैं । मिडिया का एक हिस्सा उन्हें हवा दे रहा है ।

स्वातंत्र्योत्तर भारत में स्वतंत्रता-पूर्व भारत की तुलना में कुछ नये राज्यों का सृजन हुआ है । इन नवगठित राज्यों के नामों का जिक्र 'जनगणमन' गीत में नहीं है बताकर जो इस गीत को राष्ट्रगान की मर्यादा से हटाना चाहते हैं उनकी दृष्टि एकांगी है । नामों की नामावली रचना कवि का उद्देश्य नहीं है । भावगत एकता की व्यंजना की अभिव्यक्ति जो अन्तर्निहित है गीत में उस पर गौर करना होगा । प्रान्तों के नामों के आगे अगर श्रोता अपने मन ही मन एक 'इत्यादि' जोड़ ले तभी वे समझ पायेंगे कि कवि का अभिप्राय है अखंड भारत का भौगोलिक चेहरा सामने ले आना । उसके बाद जिस भाग्यविधाता की बात की गई है वह कोई नश्वर इंसान नहीं बल्कि भारत के शाश्वत आत्मिक शक्ति के प्रतीक हैं । वह शक्ति अमूर्त्त है । एक आइडिया है । कवियों का काम है अमूर्त्त भावों को प्रतीक या रूपक की सहायता से मूर्त्त करना । यहाँ वह शिल्पकर्म सफलता के साथ किया गया है ।

सर्वव्यापी राष्ट्रीय संकट के मौजूदा दौर में 'जनगणमन' की उज्ज्वलता और बढ़ी है । विविधता में एकता की आराधना का संदेश वाहक यह राष्ट्रगान सही अर्थों में राष्ट्रगान हो उठा है ।

---

1. पुलीन बिहारी सेन को लिखा गया पत्र, विचित्रा 1344 पौष पृ० 709
2. रवीन्द्रजीवनी : प्रभात मुखोपाध्याय, द्वितीय खंड, पृ० 489
3. जनता का रवीन्द्रनाथ : सुधीरचन्द्र कॉर, पृ० 176
4. रवीन्द्र जीवनी: प्रभात मुखोपाध्याय, द्वितीय खंड, पृ० 490
5. -वही- -वही- -वही- पृ० 490
6. -वही- -वही- -वही- पृ० 491
7. जनता का रवीन्द्रनाथ : सुधीर चन्द्र कॉर, पृ० 178
8. सुधारानी देवी को लिखा गया पत्र : पूर्वाशा 1354 फाल्गुन, पृ० 738
9. रवीन्द्र जीवनी : प्रभात मुखोपाध्याय, तृतीय खंड, पृ० 14
10. शारदीय देश 1367 : प्रशांत महलानवीश, पृ० 22
11. Bengalee 1912, Jan, Page-4

□□□□□□□

भारत-विधाता

जनगणमन-अधिनायक जय हे भारतभाग्यविधाता ।
पंजाब सिन्धु गुजराट मराठा द्राविड़ उत्कल बंग
बिन्ध्य हिमाचल यमुना गंगा उच्छल जलधितरंग
तब शुभ नामे जागे, तब शुभ आशिस मागे,
गाहे तब जयगाथा ।
जनगणमंगलदायक जय हे भारतभाग्यविधाता ।
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय, जय हे ।।

['भारतविधाता' गीत का यह पहला सर्ग भारत के राष्ट्रगान के रूप में स्वीकृत हुआ । गीत के अगले चार सर्ग नीचे, पहले देवनागरी लिपि एवं फिर हिन्दी अनुवाद में दिये गये हैं ।]

अहरह तब आहवान प्रचारित, शुनि तब उदार वाणी
हिन्दु बौद्ध शिख जैन पारसिक मुसलमान खीस्टानी
पूरब पश्चिम आसे, तब सिंहासन-पाशे,
प्रेमहार हय गाँथा ।
जनगण-ऐक्य-विधायक जय हे भारतभाग्यविधाता
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय, जय हे ।।
पतन-अभ्युदय-बंधुर पंथा, युग-युग-धाबित यात्री
हे चिरसारथि, तब रथ चक्रे मुखरित पथ दिनरात्रि ।
दारूण विप्लव-माझे तब शंखध्वनि बाजे
संकटदुःख त्राता ।
जनगणपथपरिचायक जय हे भारतभाग्यविधाता ।
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय, जय हे ।।
घोरतिमिरघन निबिड़ निशीथे पीड़ित मूर्छित देशे
जाग्रत छिल तब अबिचल मंगल नतनयने अनिमेषे ।
जय हे भारत भाग्यविधाता ।
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय, जय हे ।।

रात्रि प्रभातिल, उदिल रबिच्छबि पूर्व उदयगिरिभाले-
गाहे विहंगम, पूण्य समीरण नबजीबनरस ढाले ।
तब करूणारूणरागे निद्रित भारत जागे
तब चरणे नत माथा ।
जय जय जय हे, जय राजेश्वर भारतभाग्यविधाता
जय हे, जय हे, जय हे, जय जय जय, जय हे ।।

(स्वच्छंद हिन्दी अनुवाद)

निरन्तर प्रचारित है तुम्हारा आह्वान; सुनकर उदार वाणी तुम्हारी
हिन्दु बौद्ध सिख जैन पार्सी मुसलमान और इसाई
पुरब और पश्चिम से तुम्हारे सिंहासन के करीब आते हैं
गुंथी जाती है प्रेम की हार ।
जनगण की एकता का विधान देने वाले [तुम्हारी] जय हो,
हे भारतभाग्यविधाता ।
जय हे ....

पतन और अभ्युदय का दुर्गम पंथ है, युगों से धावित हैं यात्री
हे चिरसारथी, तुम्हारे रथ के चक्कों से मुखर है पथ रातोंदिन ।
गहन क्रांति के बीच तुम्हारी शंखध्वनि बजती है
संकट औ' दुख से त्राण करने वाले
जनगण को पथ की पहचान कराने वाले, जय हे भारतभाग्यविधाता।
जय हे..........

अभेद्य अंधकार वाली काली रात के दौरान पीड़ित मुर्च्छित देश में
तुम्हारा मंगलभाव जाग्रत था अविचल, नतनयन, अनिमेष ।
दुःस्वप्न और आतंक के काल में अपनी गोद में लेकर रक्षा किया तुमने
स्नेहमयी माता ।

जनगण को दुःख से त्राण देने वाले, जय हे भारतभाग्यविधाता।
जय हे......

रात की सुबह हुई, पूरब के उदयगिरी के भाल पर उदित हुआ सूरज
गाते हैं पक्षी, पवित्र हवा नवजीवन का रस उड़ेलती है ।
तुम्हारी करूणा की अरूण राग पर जगता है सोया भारत
नत है तुम्हारे चरणों पर मस्तक हमारा ।
जय जय जय हे, जय राजेश्वर भारतभाग्यविधाता ।
जय हे..........

(जैसा कि निबंध में कहा गया है, भारत-स्वत्व या भारतीयता के विकास की चालिका-शक्ति, भारतीय सभ्यता की आत्मा के बारे में कवि की अपनी एक अवधारणा थी । प्रस्तुत कविता में उसी अवधारणा को भारत विधाता कहकर साकार किया गया है । गौर करेंगे तो पायेंगे कि पहले सर्ग में बहुराष्ट्रीय संघ के रूप में, विशाल धाराओं एवं शिखरों की धरती के रूप में भारत को आँका गया है । दूसरे सर्ग में भारतीयता के निर्माण की सांस्कृतिक पहचान की गई है । तीसरे सर्ग में रथ-चक्र और शंखध्वनि के मिथकीय मोटिव्स के माध्यम से मानव इतिहास की विकास-यात्रा को रेखांकित किया गया है । चौथे सर्ग में अंग्रेजी शासन काल के शुरुआती दौर में देश की मूर्छावस्था एवं पड़ रहे अकालों को चिन्हित करते हुये भारतविधाता को मातृरूप में देखा गया है। पाँचवें सर्ग में उसी, विभिन्न रूपों में प्रकट पर एकमेवद्वितीयम भारत-आत्मा या भारतविधाता को ही, बीसवीं सदी के प्रारंभ में देश की जनता के जागरण पर धन्यवाद दिया गया है। स्पष्ट है कि ऐसी कविता को अंग्रेज सम्राट तो क्या, किसी महान व्यक्ति की स्तुति में भी इस्तेमाल करना असम्भव है ।)

परिशिष्ट–2

[नेताजी सुभाष चन्द्र बोस के नेतृत्व में आजाद हिन्द फौज ने अपने लिए राष्ट्रगान के तौर पर 'भारत विधाता' का एक हिन्दी भावानुवाद तैयार किया था । प्रस्तुत है इस सम्बन्ध में एक उद्धरण ।]

"इस पूरी लामबन्दी के आह्वान को क्रियाशील करने तथा आजादी की लड़ाई के अंतिम चरण के लिए सेना को तैयार करने के उद्देश्य से दिनांक 9 दिसम्बर 1943 को आज़ाद हिन्द के अंतरिम सरकार के मंत्री परिषद की एक बैठक नेताजी सुभाष चन्द्र बोस के सरकारी* आवास में हुई । ....

"राष्ट्रीय एकीकरण के प्रारम्भिक कदमों के तौर पर मंत्री परिषद ने तय किया कि हिन्दुस्तानी भारत क़ी सामान्य भाषा होगी । भारतीयों के बीच सामान्य स्वागत संभाषण व प्रणामसूचक बोल होंगे 'जयहिन्द'। मौजूदा तिरंगा भारत का राष्ट्रीय झंडा होगा । 'शुभ सुख चैन'** से शुरु होने वाली गीत भारत का राष्ट्रगान होगा ।"

[पूर्वी एशिया में भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन–के एस गियानी, सिंह ब्रदर्स, लाहौर, जनवरी 1947, पृ. 112]

---

*सिंगापुर में आजाद हिन्द फौज के हेडक्वार्टर स्थित आवास

**शुभ सुख चैन की बरखा बरसे भारत भाग है जागा ।
पंजाब, सिंध, गुजरात, मराठा, द्रविड़, उत्कल, बंग ।
चंचल सागर विन्ध्य हिमाला, नीला यमुना गंगा ।
तेरे नित गुण गायें, तुझ से जीवन पायें, सब तन पाये आशा ।
सूरज बनकर जग पर चमके, भारत नाम सुभागा ।
जय हो, जय हो, जय हो; जय जय जय जय हो भारत नाम सुभागा।
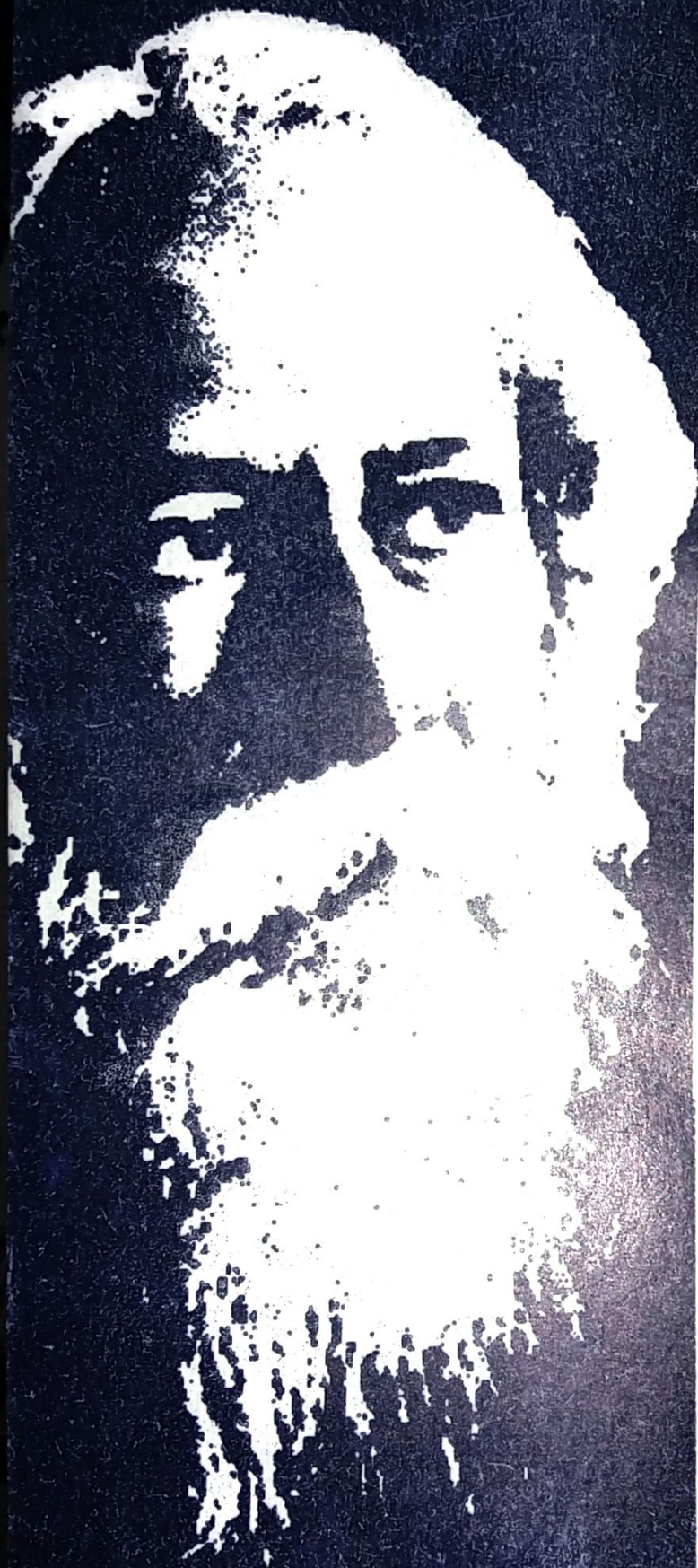
देश माता के प्रति जो भक्ति है वह क्या किसी स्वार्थ के कारण है? ऐसी युक्तियाँ दी जाती है कि हमारा देश इतना सुन्दर है, हमारी पृथ्वी ऐसी रत्नगर्भा है, हमारा आकाश मनोरम है और इसीलिए हमारा देश संसार का सर्वश्रेष्ट देश है, परन्तु ये युक्तियाँ के बल अपने आपको भुलावा देने के लिए ही दी जाती है। माता के प्रति पुत्र का प्रेम अहेतुक होता है। "मातः मेरा जन्म सार्थक है जो इस देश में पैदा हुआ हूँ, मेरा जन्म सार्थक है जो मैं तुझे प्यार कर रहा हूँ। मुझे ठीक नहीं मालूम कि तेरे पास किसी रानी की भाँति कितना धन है, कितने रत्न हैं, सिर्फ इतना ही जानता हूँ कि तेरी छाया में आने से मेरे अंग-अंग जुड़ा जाते हैं। मैं ठीक नहीं जानता कि और किसी वन में ऐसे फूल खिलते हैं या नहीं जो इस प्रकार अपनी सुगन्धि से व्याकुल कर देते हैं, यह भी नहीं जानता कि किसी आसमान में ऐसी मधुर हँसी हँसने वाला चाँद उठता है या नहीं। सिर्फ इतना जानता हूँ कि तुम्हारे प्रकाश में पहले पहल मैंने आँखें खोलीं और वे जुड़ा गई। बस इसी आलोक में आँखें बिछाए रहूँगा और अन्त में इसी आलोक में उन्हें मूँद भी लूँगा।"